अध्ययन सामग्री

बी.ए. पार्ट 2
प्रश्नपत्र – तृतीय
डॉ० मालविका तिवारी
सहायक प्रोफेसर
संस्कृत विभाग
एच.डी. जैन कॉलेज
वी.कुं.सिं. वि०, आरा

20.07.20

दशकुमारचरितम्

दण्डी का काल-निर्णय करें

संस्कृत साहित्य में लब्धप्रतिष्ठित महाकवि दण्डी अपनी विशिष्टताओं के कारण चिरस्मरणीय हैं। लक्ष्य ग्रन्थों में 'दशकुमारचरितम्' तथा अलंकारशास्त्रों में 'काव्यादर्श' इनकी प्रसिद्ध कृति है। कोमल, रस-पेशल तथा अलंकृतशैली 'दशकुमारचरित' में पग-पग पर हमें देखने को मिलती है। वस्तुतः गद्य साहित्य के क्षेत्र में बाण तथा सुबन्धु से ये किसी तरह कम नहीं हैं। लालित्यपूर्ण पदप्रयोग के कारण 'दशकुमारचरित' सहृदय रसिकों का भरपूर मनोरंजन करता है एवमेव काव्यादर्श भी अलंकारशास्त्र के मध्य उपादेय तथा ग्राह्य है।

महाकवि दण्डी के कार्यकाल के सम्बन्ध में यद्यपि स्पष्ट रूप से कोई मत नहीं बन सका है तथापि इस सम्बन्ध में कई गवेषक, विद्वानों का प्रयास अत्यन्त सराहनीय है। आभ्यन्तर तथा बाह्य प्रमाणों के आधार पर दण्डी के काल के सम्बन्ध में विचार किया जा सकता है।

नवम शताब्दी के ग्रन्थों में दण्डी का नामोल्लेख पाए जाने से निश्चित है कि उनका समय उक्त शताब्दी से पीछे कदापि नहीं हो सकता। सिंहली भाषा के अलंकार ग्रन्थ

‘सिय-बस-लकर’ (स्वभावालंकार) की रचना काव्यादर्श के आधार पर की गई है। इसका रचयिता, ‘राजा सेन प्रथम’ महावंश के अनुसार 846-66 ई० तक राज्य करता था। इससे भी पहले के कन्नड़ भाषा के अलंकार ग्रन्थ ‘कविराजमार्ग’ में काव्यादर्श की यथेष्ट छाया देखी गई है। इसके उदाहरण या तो काव्यादर्श से पूर्णतः लिए गए हैं या कहीं-कहीं कुछ परिवर्तित रूप में रखे गये हैं। हेतु, अतिशयोक्ति आदि अलंकारों के लक्षण तो दण्डी से अक्षरशः मिलते हैं। इसके लेखक अमोघवर्ष का समय 815 ई० के आस-पास माना जाता है। अतएव काव्यादर्श की रचना नवीं शताब्दी के अनन्तर कदापि स्वीकृत नहीं की जा सकती। यह तो दण्डी के काल की अन्तिम सीमा है। अब पूर्व की सीमा की ओर ध्यान दें तो पता चलता है कि काव्यादर्श के समग्र पद्य दण्डी की ही मौलिक रचना नहीं है, उनमें प्राचीनों के भी पद्य सन्निविष्ट हैं, यह निर्विवाद है। ‘लक्ष्म लक्ष्मीं तनोतीति प्रतीति-सुभगं वचः’ में दण्डी के ‘इति’ शब्द के प्रयोग से यहाँ जाना जाता है कि कालिदास के प्रसिद्ध पद्यांश ‘मलिनमपि हिमांशोर्लक्ष्म ‘लक्ष्मीं तनोति’ से ही उद्धरण दिया गया है। अतः इनके कालिदास के अनन्तर होने में तो संदेह का स्थान ही नहीं है।

सुबन्धु ने जिस अलंकृत शैली का प्रवर्तन किया था उसका चरम परिपाक बाणभट्ट की रचना में हुआ है। दण्डी की रचना में सुबन्धु की अलंकृत और कृत्रिम शैली के अतिरिक्त पञ्चतन्त्र की स्वाभाविक शैली का समन्वय परिलक्षित होता है। कादम्बरी तथा हर्षचरित की चरमोत्कर्ष प्राप्त अलंकृत शैली की छाया ‘दशकुमारचरित’ में नहीं दिखती। अतः इतना तो निश्चित है कि दण्डी सुबन्धु एवं बाण के मध्यवर्ती होंगे नहीं तो बाण की अलंकृत शैली का प्रभाव उनके दशकुमारचरित पर अवश्य पड़ता। हालाँकि आचार्य बलदेव उपाध्याय ने विभिन्न तथ्यों के द्वारा दण्डी को बाण के परवर्ती सिद्ध करने का प्रयास किया है।

वे काव्यादर्श के इस श्लोक का उदाहरण देते हुए कहते हैं कि इसमें कादम्बरी के शुकनासोपदेश की छाया स्पष्ट दृष्टिगोचर हो रही है।

“अरत्नालोकसंहार्यमवार्यं सूर्यरश्मिभिः।
दृष्टिरोधकरं यूनां यौवनप्रभवं तमः॥”

परन्तु अधिकांश विद्वान् उनके इस तर्क से सहमत नहीं हैं। वस्तुतः यह मान लेना न्यायोचित नहीं है कि यह श्लोक बाण से प्रभावित है क्योंकि यह भी तो संभव है कि बाण ने ही काव्यादर्श के इस श्लोक का अनुवाद किया हो।

अधिकांश विद्वान् आलोचक दण्डी को बाण से 20-25 वर्ष पूर्व मानते हैं। साम्प्रतिक विद्वानों के मतानुसार दण्डी का समय सप्तमशती का उत्तरार्द्ध है। वे बाण के पूर्ववर्ती थे। उनका गद्य बाण की अपेक्षा कम अलंकृत एवं श्लेष वक्रोक्ति अलंकारों से बोझिल न होकर प्रसाद-गुण युक्त है। यदि बाण दण्डी के पूर्ववर्ती होते तो उनकी शैली भी निश्चित रूप से अलंकृत होती। दूसरी बात यह है कि दशकुमारचरित में जिस समाज का चित्रण किया गया है वह हर्षवर्द्धन के पूर्व भारत से सम्बद्ध है। इस दृष्टि से उनका समय 600 ई० के आस-पास निश्चित होता है।